महर्षि भरद्वाज की दृष्टि में अन्तरिक्ष एवं सूर्य-रश्मि विज्ञान

शैलजा पाण्डेय

प्रबन्धेऽस्मिन् लेखिकाः भरद्वाजप्रणीतविमानशास्त्रमाधृत्य अन्तरिक्षसम्बन्धीनि सूर्यरश्मिविषयकाणि च विज्ञानतत्त्वानि आधुनिकविज्ञानिनामपि विस्मयापादकानि सप्रमाणं प्रकाशयति।

महर्षि भरद्वाज ऋग्वेद के षष्ठमण्डल के मन्त्रद्रष्टा होने के साथ ही यान्त्रिकी, वैमानिकी, धातुविज्ञान, अन्तरिक्ष विज्ञान एवं सूर्य-रश्मि विज्ञान के तलस्पर्शी उपदेष्टा थे। मन्त्र-दर्शन के द्वारा परम ज्ञान की प्राप्ति के साथ ही स्थूल-पदार्थ-विद्या (आधुनिक विज्ञान) के सूक्ष्म ज्ञान में भी उनकी अप्रतिहत-गति थी। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण इनके ग्रन्थ 'यन्त्र-सर्वस्व'[१] में प्राप्त होता है।

अन्तरिक्ष लोक एवं सूर्य रश्मियों का सूक्ष्म विवेचन 'यन्त्र सर्वस्व' के खण्ड 'वैमानिक प्रकरण' में प्राप्त होता है। विमान को भूमि से अन्तरिक्ष में पहुँचने तक वायु-मण्डल एवं सूर्य-रश्मियों के प्रभाव में रहना पड़ता है। अतः अन्तरिक्ष, वायु-मण्डल एवं सूर्य रश्मियों का पूर्ण एवं गहन ज्ञान विमान चालक के लिये अनिवार्य होता है।

द्युलोक में देवता रूप में सूर्य का वर्णन वेदों से प्रारम्भ होता है। इनकी एक संज्ञा 'आदित्य' भी है। आदित्य शब्द का प्रयोग वेद एवं पुराण दोनों में प्रकाशमान् देवों के गण के लिये प्रायः हुआ है। ऋग्वेद में ६ आदित्यों का उल्लेख है[२] तो पुराणों में १२ आदित्यों का वर्णन प्राप्त होता है।[३] कहीं-कहीं ८ आदित्यों[४] की भी चर्चा की गई है। इन बारह आदित्यों के माध्यम से ऋषियों ने बारह महीनों में सूर्य के प्रकाश, ताप एवं रश्मि-गत प्रभावों में आने वाले परिवर्तन को दर्शन का प्रयत्न किया है।[५] ये सूर्य के १२ स्वरूप हैं, जिनकी रश्मियों का

पृथक्-पृथक् मासों में पृथक्-पृथक् प्रभाव होता है। दिन एवं रात्रि के मान का एवं ऋतुओं का नियंत्रण इन्हीं १२ स्वरूपों से निर्धारित होता है। इन १२ आदित्यों का अभिधान उनके गुण-धर्म को दृष्टि में रखते हुये इस प्रकार प्राप्त होता है—चैत्र मास में धाता, वैशाख में अर्यमा, ज्येष्ठ में मित्र, आषाढ़ में वरुण, श्रावण में इन्द्र, भाद्रपद में विवस्वान, आश्विन् में पूषा, कार्तिक में पर्जन्य, मार्गशीर्ष में अंश, पौष में भग, माघ में त्वष्टा एवं फाल्गुन में विष्णु।[६]

सम्पूर्ण सृष्टि के संचालक एवं काल-नियन्ता भुवन-भास्कर सूर्य का सर्वाधिक प्रभाव आकाश मण्डल एवं अन्तरिक्ष में होता है क्योंकि इनसे सूर्य का सीधा सम्बन्ध है। सूर्य-रश्मियों का संयोग जब वायु, आकाशीय अग्नि, मेघ-विद्युत, अन्य ग्रहों, नक्षत्रों, राशियों एवं धूमकेतुओं के साथ होता है तब भूलोक पर विभिन्न प्रकार के प्रभाव दृष्टिगोचर होते हैं। महर्षि भरद्वाज ने विमान सञ्चालन के सन्दर्भ में अन्तरिक्ष एवं वायु-मण्डल में उत्पन्न सूर्य-रश्मियों के प्रभाव का इस प्रकार किया है—

वायुमण्डल में सूर्य रश्मियों का प्रभाव

१. दाह—

सूर्य-रश्मियों के प्रभाव से पदार्थों के रस का शोषण होता है।[७] इसके फलस्वरूप प्रभावित पदार्थ शुष्क हो जाता है। वायु-मण्डल में जब की किरणें प्रचण्ड वेग से किसी पदार्थ पर पड़ती हैं तो वह पदार्थ भस्म हो जाता है। वाल्मीकि रामायण में सूर्य-ताप से सम्पाति के दग्ध होने का उल्लेख प्राप्त होता है। महर्षि भरद्वाज के अनुसार सूर्य-गोलक का बाडवामुख किरण-प्रवाह विमान पर पड़ता है तो उसके भस्म होने की सम्भावना होती है।[८]

२. सूर्य-रश्मि का दिशाओं से सम्बन्ध एवं उनसे उत्पन्न नेत्र-कष्ट तथा अन्य दुष्प्रभाव—

आकाश की प्रत्येक दिशा में सूर्य-रश्मियों का प्रभाव पृथक्-पृथक् होता है। इन पृथक् वाली सूर्य-रश्मियों का जब आपस में संसर्ग होता है तब शक्ति-भेद के कारण इनमें संघर्ष उत्पन्न होता है। इस संघर्ष के वेग से चार प्रकार के विष-अन्ध, अन्धकार, पिंजूष एवं तारप अथवा नेत्रघ्न उत्पन्न होते हैं। इनसे अन्तरिक्ष में उपस्थित प्राणियों के क्रमशः रक्त, जठराग्नि, नेत्रों के कृष्ण तारे एवं नेत्र-ज्योति क्षति-ग्रस्त होते हैं।[९]

सूर्य-रश्मियों की संख्या अनन्त होती है। विभिन्न ऋतुओं में उनसे अनेक विष-शक्तियाँ उत्पन्न होती हैं जिनका विनाशकारी प्रभाव त्वचा, माँस, भेद, मज्जा, अस्थि, स्नायुतन्त्र एवं रक्त-शिराओं पर पड़ता है।[१०] इसके अतिरिक्त आकाश में वायु, सूर्य-रश्मियों एवं आकाशीय अग्नि के प्रभाव से १२२ प्रकार की विष-शक्तियाँ उत्पन्न होती हैं जो गगन-चारियों के लिये मारक सिद्ध होती हैं।[११]

३. वायु का आवर्त एवं सूर्यातप–

आकाश मण्डल में वायु के आवर्त होते हैं। दो वायु-आवर्तों के आपस में टकराने से शक्ति उत्पन्न होती है। इस आवर्त-शक्ति से जब सूर्यातप का संयोग होता है, उस समय सूर्य-किरणों की शक्ति वज्र के सदृश विनाशकारी होती है।[१२]

४. मेघ-विद्युत, वायु एवं सूर्य-रश्मियाँ–

आकाश मण्डल में मेघ की विद्युत-शक्ति, वायु की शक्ति एवं सूर्य-रश्मि की शक्तियों का आपस में संघर्ष होता है। इनके संघर्ष से गुहा-संज्ञक एवं अन्य विषाक्त प्रभाव उत्पन्न होते हैं। ये विष-शक्तियाँ आकाशचारी विमानचालक एवं यात्रियों के विभिन्न रोगों का कारण बनती हैं। इससे मनुष्यों में कुष्ठ, अपस्मार, खास एवं शूल जैसे रोग उत्पन्न होते हैं। इन विषाक्त प्रभावों से मनुष्यों को बचाने के लिये विमान में 'गुहागर्भ दर्पण' संज्ञक यन्त्र लगाया जाता है। यदि इन शक्तियों को यन्त्र के माध्यम से शत्रु-विमान पर प्रक्षिप्त किया जाय तो शत्रुओं को नष्ट किया जा सकता है।[१३]

सूर्यादि ग्रह एवं द्वादश राशियाँ

ज्योतिष-शास्त्र के अनुसार सूर्य ग्रहों का राजा है। सूर्य एवं अन्य ग्रहों के संचार-पथ में १२ राशियाँ आती हैं। इनके चार, अतिचार, वक्र एवं वक्र-संचार के कारण मेष आदि राशियों में निहित शक्ति का मन्थन होता है। इससे आकाश तरङ्गों की शक्ति का उद्रेक होता है एवं उनमें आपस में संघर्ष होता है। इन सबसे उत्पन्न शक्ति का प्रवाह अग्नि-ज्वाला के प्रवाह के सदृश अत्यन्त वेगवान् होता है। इस उष्ण-प्रवाह के सम्पर्क में आने वाले विमान आदि दग्ध होकर भस्मीभूत हो जाते हैं।[१४]

सूर्यरश्मि एवं धूमकेतु

आकाश-मण्डल में तीन करोड़ से अधिक धूमकेतु हैं। ये आकाश के आठवें क्षेत्र में स्थित हैं। उनमें ८ हजार धूमकेतुओं के भीतर विद्युत् हैं। उन विद्युत्-गर्भ धूमकेतुओं में १२ महत्त्वपूर्ण हैं। उनके नाम महाकाल, महाग्रास, महाज्वालामुख, विस्फुलिंगमुख, दीर्घवात, खंज, महोर्मिक, स्फुलिंगवमन, गण्ड, दीर्घजीह्व, दुरोणक एवं सर्वास्य हैं। इनमें निहित द्वादश विद्युत्रोचिषी, दाहका, सिंही, पतङ्गा, कालनेमिका, लता, बृंदा, रटा, चंडी, महोर्मी, पार्वणी एवं मृडा संज्ञिका हैं। ये सभी धूमकेतुओं की उल्का-नेत्र हैं। इन द्वादश विद्युत् युक्त धूमकेतुओं का प्रभाव सबसे अधिक शरद् (अक्टूबर, नवम्बर) एवं वसन्त (मार्च, अप्रेल) में पड़ता है। इनसे जब सूर्य-रश्मियों का सम्पर्क होता है तब 'अजिगरा' नामक भयंकर शक्ति उत्पन्न होती है। इस शक्ति के प्रभाव से गगन चारी व्योम-यान में स्तम्भन दोष उत्पन्न होता है।[१५]

सूर्यरश्मियाँ एवं ऋतुयें वसन्त ऋतु एवं सूर्य-रश्मि–

वसन्त ऋतु में सूर्य-रश्मियों से 'सौरिका' संज्ञक शक्ति प्राप्त होती है। सौरिका का प्रवाह आग्नेय कोण से होता है। सौरिका शक्ति में अग्नि तत्त्व एवं चन्द्र तत्त्व (ऊष्मा एवं शीत) दोनों होते हैं। समशीतोष्णता के कारण इसमें जीवनी शक्ति है। वेदों में भी इस सृष्टि को 'अग्निषोमात्मकं जगत्' कह कर इस तथ्य की पुष्टि की गई है। सृष्टि की उत्पत्ति उचित ऊष्मा एवं उचित शीत के द्वारा हुई है। सौरिका शक्ति के प्रभाव से वृक्षों एवं लताओं में प्रभा, पुष्प एवं पल्लव स्फुटित होते हैं। इसी प्रकार इसी शक्ति के प्रभाव से मनुष्यों में भी स्थित सप्त धातुयें पुष्ट होकर बल, दृढ़ता एवं तेज आदि प्रदान करती हैं।[१६] इस प्रकार वसन्त ऋतु की कारक सूर्य की सौरिका-शक्ति है।

वसन्त से ग्रीष्म में सूर्यरश्मियों का प्रवेश–

वसन्त के पश्चात् धीरे-धीरे ग्रीष्म ऋतु का आगमन होता है। आग्नेय कोण से प्रवाहित होने वाली सूर्य-रश्मियों की शक्ति जिस समय सूर्य एवं पृथिवी के केन्द्र में प्रवेश करती है, उस समय उसमें प्रबल ज्वालामयी शक्ति उत्पन्न होती है। इस शक्ति की संज्ञा 'कोलाहल' है। इसके प्रभाव से पृथिवी पर ग्रीष्म ऋतु आती है। कोलाहल शक्ति में दाहक सामर्थ्य होता है। आकाश में उपस्थित इस दाहिका शक्ति से व्योमचारी विमान जल सकता है।[१७]

ग्रीष्म ऋतु एवं सूर्य-रश्मि–

ग्रीष्म काल में सूर्य-किरणों में स्थित शक्ति का प्रवाह वायव्य कोण से होता है। इसे 'पञ्चशिखा' शक्ति कहते हैं। इस शक्ति से युक्त सूर्य-रश्मियों में दो प्रकार की विष-शक्तियाँ होती हैं जिनसे सभी स्थावर एवं जङ्गम प्राणी रसहीन होकर सिकुड़ने एवं सूखने लगते हैं। इन विषशक्तियों की संज्ञा 'गृन्धिका' एवं 'मारिका' है।[१८]

मध्यग्रीष्मकालीन सूर्यरश्मियाँ–

मध्य ग्रीष्मकाल में सूर्य रश्मियों के द्वितीय वर्ग में अनेक किरणों का समूह होता है। इनमें तीसरे, पाँचवें एवं दसवें वर्ग की किरणें अत्यन्त ऊष्म होती हैं। ये किरणें विश्व के कूर्म भाग से 'प्रलोभ्च' शक्ति को खींचती हैं, जिससे 'कुलिका' संज्ञक शक्ति उत्पन्न होती हैं। यह शक्ति परस्पर मिश्रित होकर अत्यन्त उष्ण एवं ज्वालामयी होती है। इसके प्रभाव में आने पर आकाश में संचरण करने वाले विमानों के भस्म होने की सम्भावना होती है।[१९]

इन ग्रीष्म कालीन सूर्य किरणों के घातक प्रभाव के कारण पृथिवी पर उपस्थित विषाणु भी नष्ट होते हैं एवं इन्हीं के प्रभाव से जल अवशोषित होकर वाष्प एवं अन्ततः मेघ बनता है। यह सुविदित वैज्ञानिक तथ्य है।

सूर्यरश्मियाँ, ग्रह एवं नक्षत्र तथा शीत की उत्पत्ति

आकाश मण्डल में आठ ग्रह मंगल, सूर्य, शनि, शुक्र, बुध, चन्द्रमा, रुरु एवं बृहस्पति तथा आठ नक्षत्र कृत्तिका, शतभिषा, मखा, मृगशिरा, चित्रा, श्रवण, पुष्य एवं अश्विनी शीत के निर्धारक महत्त्वपूर्ण नक्षत्र हैं। ये आठों नक्षत्र संचरण करते हुये जब सूर्यादि ग्रहों के सम्पर्क में आते हैं तब उनकी शक्तियों के सम्मेलन से शीत-प्रभाव उत्पन्न होता है।[२०] 'शक्तिसर्वस्व' के मतानुसार जब शतभिषा नक्षत्र सूर्य के सम्पर्क में आता है तो उससे शीत-ज्वालामुखी संज्ञक शीत शक्ति उत्पन्न होती है।[२१]

'ऋतुकल्प' ग्रन्थ के अनुसार शरद् ऋतु में सूर्य रश्मियों के सम्पर्क में ग्रहों एवं नक्षत्रों के आने पर तीन शीत-शक्तियाँ शीत ज्वाला, शैत्यदंष्ट्र एवं शैत्योद्गम उत्पन्न होती हैं। इन शक्तियों का सम्पर्क जब शीत-रस-वात शक्ति से होता है तब उनसे शैत्य-रस-ज्वाला, शैत्यहेमा एवं स्फोरणी संज्ञक शक्तियाँ

उत्पन्न होती हैं। ये तीनों आपस में मिल कर वारि-शीत-सीकर शक्ति (ओस एवं कुहरा) बन जाती हैं। इसी प्रकार शीतघनरसा एवं शैत्य मण्डूकिनी शक्तियाँ आपस में मिलकर शीतवातरसप्रावाहिक शक्ति (शीत लहरी) बन जाती हैं।[२२]

आकाशस्थ पञ्चशक्तियाँ एवं सूर्यरश्मियाँ तथा विमान-सञ्चालन में इनका योगदान–

अन्तरिक्ष में क्ष, ज, ल, भ एवं ह संज्ञक पाँच शक्तियाँ होती हैं।[२३] 'गोपथ कारिका' में इन शक्तियों की व्याख्या करते हुए क्ष को शिरीष अथवा मेघ-विद्युत्, ज को मेघ, ल को पृथिवी तत्त्व, भ को तारा-गण एवं ह को आकाश कहा है। इन पाँचों तत्त्वों के योग से विमान के चारों ओर एक अनुकूल परिवेश निर्मित होता है। इससे विमान सूर्य-किरणों की सुरक्षात्मक एवं गति प्रदान करने वाली शक्ति (सूर्य जन्य ऊर्जा या सोलर एनर्जी) प्राप्त करता है।[२४]

सूर्य-रश्मियों के द्वारा विविध दृश्य-प्रभावों की सर्जना–

सूर्य की रश्मियों के माध्यम से इस जगत् में पदार्थों के रूप, वर्ण, और आकृति दृष्टिगोचर होती है। द्वादश आदित्यों में एक संज्ञा 'त्वष्टा' है। वेद में इन्हें तक्षण कार्य से सम्बद्ध किया गया है। इनका कार्य पदार्थों को आकृति एवं रूप प्रदान करना है। महर्षि भरद्वाज ने विमान-संचालन को केन्द्र में रखकर सूर्य-रश्मियों द्वारा अन्तरिक्ष में अनेक दृश्य-प्रभावों की उत्पत्ति का वर्णन किया है। जो इस प्रकार है–

सूर्य-रश्मियों द्वारा विमान को तमसाच्छादित करना–

पृथिवी के ऊपर वायु-मण्डल में कई रेखा-पथ हैं। आठवें वायु-पथ में 'यासा', 'वियासा' एवं 'प्रयासा' आदि वात-शक्तियाँ सूर्य-रश्मियों से तमः शक्ति आकृष्ट कर सकती हैं। इन वात शक्तियों द्वारा तमः शक्ति खींच कर आपस में संयोजन कराया जाय तो गगन स्थित विमान आदि दिन में भी तमसाच्छादित परिलक्षित होते हैं।[२५] इससे यह ज्ञात होता है कि तमः शक्ति भी सूर्य रश्मियों में निहित है जबकि चाक्षुष-प्रत्यक्ष इसके विपरीत होता है।

सूर्य-रश्मियों से माया विमान का प्रदर्शन–

आकाश-मण्डल में विद्युत्, वात एवं सूर्य-किरणों के परस्पर संयोग को विमान के पुरो भाग में स्थित 'विश्वक्रियादर्पण' नामक यन्त्र पर प्रतिफलित किया

जाता है। इसके पश्चात् प्रकाश-संयोजन इस प्रकार किया जाता है। जिससे आकाश में माया-विमान परिलक्षित होता है।[२६] इसके प्रभाव से आकाश में मूल विमान के ही सदृश अन्य कई विमान परिलक्षित होते हैं जिससे शत्रुद्वारा मूल विमान की पहचान कठिन हो जाती है। इस प्रसंग में राम-रावण युद्ध के समय मेघनाद द्वारा किये गये इस प्रकार के प्रयोग स्मरणीय हैं।

सूर्य-रश्मियों द्वारा श्वेताभ्र-मण्डल का प्रदर्शन–

सूर्य-मण्डल के मध्य में स्थित वैणरथ्य किरण-शक्ति, आकाश-तरङ्ग की शक्ति एवं वायु-मण्डल की बनाहाविकरणादि शक्ति के संयोग से आकाश में विमान को इस प्रकार आच्छादित किया जाता है जिससे विमान श्वेताभ्र मण्डल के सदृश दृष्टिगोचर होता है।[२७]

बाल-रवि का दर्शन–

संज्ञान आदि सूर्य की षोडश कलाओं में १२ से १६ कला तक की प्रभा को आकृष्ट कर आकाश के चतुर्थ पथ के वायु-मण्डल में नियोजित करें। इसी प्रकार आकाशीय तरङ्ग-शक्ति की प्रभा को ग्रहण कर वायु-मण्डल के सप्तम आवरण की प्रभा शक्ति में सम्मिलित करें। इन दोनों शक्तियों को विमान के यंत्रों से इस प्रकार से संयोजित किया जाता है जिससे असमय में आकाश में उदित होते हुये सूर्य की छवि परिलक्षित होती है।[२८]

नक्षत्र-मण्डल का प्रदर्शन–

वायु शक्ति के दसवें भाग, आकाशीय जल शक्ति के सातवें भाग एवं सूर्य-किरण के सोलहवें भाग को आकाश-तरङ्ग की शक्ति से संयुक्त किया जाता है। इस संयोग से उत्पन्न शक्ति को विमान के यंत्र से इस प्रकार प्रसारित किया जाता है, जिससे आकाश में नक्षत्र-मण्डल दृष्टि-गत होता है।[२९]

विमान की सर्पवत् गति–

वायु के दण्डवक्त्र आदि सात प्रकार की शक्तियों का सूर्यकिरणों से संयोजन करा कर विमान में प्रवेश करा दिया जाता है, तो विमान सूर्य की भाँति संचरण करता है।[३०]

विमान की आकाश एवं मेघ के सदृश प्रतीति–

सूर्य-किरणों को विशेष प्रकार से विमान पर डालने से विमान आकाश के एवं मेघ के सदृश प्रतीत होने लगता है।[३१]

अमावस्या की रात्रि का दृश्य

सूर्य रश्मियों की तमः शक्ति को आकृष्ट कर यन्त्र द्वारा इस प्रकार प्रसारित किया जाता है जिससे मध्याह्न में आकाश में अमावस्या की रात्रि का दृश्य उपस्थित हो जाता है।[३२]

महर्षि भरद्वाज ने इस प्रकार सूर्य रश्मियों के पृथिवी, वायु-मण्डल एवं अन्तरिक्ष में पड़ने वाले विविध प्रभावों का विमान-शास्त्र के सन्दर्भ में विचार प्रस्तुत किया है। सूर्य-विज्ञान के क्षेत्र में परवर्ती तत्त्वदर्शियों ने भी अध्ययन किया है। इस प्रसङ्ग में पं. मधुसूदन ओझा एवं स्वामी विशुद्धानन्द जी स्मरणीय है। पं॰ ओझा ने सूर्य रश्मियों से सम्बद्ध सृष्टि प्रक्रिया पर 'इन्द्र विजय' एवं 'सौदामिनी विद्या' संज्ञक दो ग्रन्थ लिखे।[३३] पं॰ गोपीनाथ कविराज के गुरु स्वामी विशुद्धानन्द जी सूर्य-रश्मि विज्ञान के शास्त्रीय एवं प्रायोगिक दोनों पक्षों के तलस्पर्शी ज्ञाता थे। इस विज्ञान के लिये ४ मूलभूत ज्ञान आवश्यक है–

(१) सूर्य रश्मियों का परिचय (२) प्रत्येक रश्मि को आकृष्ट करने की कला का ज्ञान (३) एक रश्मि के साथ दूसरी रश्मि का संयोजन (४) उन दोनों के साथ अन्य रश्मियों का संयोजन। इसमें इस बात का ध्यान रखना भी आवश्यक है कि प्रयोक्ता किस वस्तु की सृष्टि के लिये रश्मि-संयोग कर रहा है एवं उस वस्तु के लिये किन रश्मियों का किस क्रम से संयोजन करना चाहिये। किन्तु रश्मियों के वर्णों के संयोग में प्रधान समस्या यह होती है कि सभी वर्ण आशुसंचारी होते हैं। अतः, क्षणिक स्थिति वाले वर्णों का आपस में संयोजन असंभव प्रतीत होता है। किन्तु यह जगत् ही वर्णमय है। इस अभिव्यक्त जगत के मूल में विशुद्ध शुभ्र तत्त्व श्वेत वर्ण के रूप में विराजमान है। इस वर्ण के ऊपर प्रत्येक वर्ण की सत्ता अभिव्यक्त होती है। दूसरे इस वर्ण में प्रकाशित होने वाले वर्ण को स्थायित्व प्रदान करने का भी सामर्थ्य है। इसी वर्ण को आधार बना कर जिस वस्तु या तत्त्व की सृष्टि करनी हो उसके अनुकूल वर्ण वाली रश्मियों का उचित क्रम से आकर्षण एवं संयोजन उस वस्तु को उत्पन्न करता है।[३४] इस सन्दर्भ में यह भी ध्यान देने योग्य है कि प्रत्येक वस्तु के पृथक्-पृथक् संघात

है एवं उनके व्यञ्जक वर्णों के क्रम के भी पृथक्-पृथक् सूत्र (फार्मूले) हैं। विज्ञानवेत्ता प्रत्येक वस्तु का विश्लेषण कर उसके संघटक तत्त्व एवं वर्णतत्त्वों के क्रम का ज्ञानप्राप्त करता है। तत्पश्चात् वस्तु को उत्पन्न करने के लिये क्रमानुसार रश्मियों का लेंस या आतिशी शीशे से आहरण करता है। अन्तिम रश्मि के संयोजन के पश्चात् ही अभीष्ट पदार्थ की अभिव्यक्ति होती है एवं वस्तु प्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगोचर होता है।[३५] इस प्रकार अर्वाचीन तत्त्वदर्शियों ने प्राचीन ऋषियों के मत के प्रयोग द्वारा सम्पुष्ट किया है।

अन्ततः निष्कर्ष के रूप में महर्षि भरद्वाज द्वारा प्रतिपादित सूर्य एवं अन्तरिक्ष विज्ञान के विषय में यह कहा जा सकता है–

१. सूर्य रश्मियों द्वारा सृष्टि में काल एवं ऋतुओं का संचालन एवं वर्ष को प्रत्येक मास-पक्षादि के सूर्य रश्मियों के प्रभाव का ज्ञान ऋषियों को वैदिक-काल से ही था। अग्निषोत्मक जगत् में अग्नि तत्त्व सूर्य में निहित है।

२. वायु, विद्युत् एवं ग्रह-नक्षत्रादि के सम्पर्क में आने पर सूर्य-रश्मियों में विनाशक शक्ति का उद्गम होता है। महर्षि भरद्वाज के अनुसार इनकी प्रखरता अन्तरिक्ष में स्थित प्राणियों में विविध प्रकार के शारीरिक रोग एवं मानसिक रोग उत्पन्न करती हैं एवं उन्हें भस्म भी करती हैं।

३. सूर्य-रश्मियों में शोषक एवं मारक शक्ति के साथ ही जीवन-शक्ति भी अन्तर्हित है। जीवन-शक्ति का विकास प्रधान रूप से वसन्त काल में दृष्टिगोचर होता है। संहारक शक्ति भी प्रकारान्तर से जीवन एवं स्वास्थ्य प्रदान करती है क्योंकि इससे सृष्टि के विषाणु भी नष्ट होते हैं। प्राणियों एवं पृथिवी के रस को शोषित करने वाली सूर्य-रश्मियाँ प्रावृट् काल में मेघ के द्वारा शोषित जल को स्वच्छ निर्मल जल के रूप में प्रदान करती हैं।

४. सूर्य रश्मियों द्वारा विविध प्रभावों की अभिव्यक्ति की चर्चा करते हुये महर्षि भरद्वाज ने सूर्य रश्मियों में निहित सृष्टिक्षमता एवं उनकी शक्तियों के संयोजन का भी वर्णन अत्यन्त वैज्ञानिक रूप से प्रस्तुत किया है।

इस प्रकार महर्षि भरद्वाज निस्सन्देह सूर्य रश्मि एवं अन्तरिक्ष विज्ञान के सभी रहस्यों के पारङ्गत ज्ञाता थे। ऋषि की कालजयी दृष्टि द्वारा दृष्ट सभी सिद्धान्त आज भी उतने ही समीचीन है जितने पूर्व काल में थे।

१. वैमानिक शास्त्र एरोनौटिक्स (यन्त्र सर्वस्व, वैमानिक प्रकरण), सम्पादक-जी.आर.जौसयेर, कौरोनेशन प्रेस, मैसूर, १९७३

२. इया गिर आदित्येभ्यो घृतस्नूः सानाद्राजभ्यो जुह्वा जुहोनि। शृणोतु मित्रो अर्यमा भगो नस्तु विजातो वरुणो दक्षो अंश।।–**ऋग्वेद**, २ ।२७ ।१

३. विवस्वानर्यमा पूषा त्वष्टाथ सविता भगः।
धाता विधाता वरुणो मित्रः शक्रः उरुक्रमः। -**विष्णु, पुराण**, १.१५.१३१ तथा १३२, १३३

४. **ऐतरेय ब्राह्मण**, १.१.९.१

५. कतमे आदित्या इति। द्वादशमासाः संवत्सरस्य एते आदित्याः।–**शतपथ ब्राह्मण**, ११.६.६.८, **बृहदारण्यक उपनिषद्**, ३.९.५, **श्रीमद् भागवत पुराण**, ५.२२.३

६. **विष्णु पुराण**, २.१०.३-१८

७. आदित्यः कस्माद्। आदत्ते रसान्। **निरुक्त**, १.१४ रसान् रश्मिभिरादाय वायुनायं (सूर्यः) गतः सह।–**बृहद्देवता**, १.६८

८. लङ्घनरहस्यो नाम।–सूर्यगोलबाडवामुखकिरणज्वालाप्रवाहः विमानाभिमुखो भवति तेन विमानः प्रज्वलितो भवति।–वैमानिक प्रकरण, १.२.२१, पृ.९

९. अर्कांशुयुद्धसञ्जातशक्तिस्यात् पिञ्जुलेति। सा नेत्रकृष्णतारायग्रप्रभाग्राहीति वर्णिता। तदुक्तमंशुबोधिन्यां-अग्नेः पूर्वदिश्यस्य स्थानमारभ्य संख्यातः। उपदिश्यस्य स्थानान्तमष्टधा दिग्विनिर्णयः–तेषामन्योन्यसंसर्गो वारुणी योगतो भवेत्। अतोंऽशूनां भवेद् युद्धं शक्तिभेदत्वकारणात्। तस्मिन् परस्परं वेगात् तत्तद्दिशि। विशेषतः। सङ्घर्षणात् प्रजायन्ते चतस्रो विषशक्त्यः। अन्धान्धकारपिञ्जूषतारपा इति ताः क्रमात्। रक्तजाठरतारायग्रप्रभाश्चाक्षिद्वयं हन्युः।–**वैमानिक प्रकरण**, २.१.१, पृ. ३५

१०. पञ्चविंशतिसंख्याका ऋतूनां विषशक्तयः। त्वङ्मांसभेदोमज्जास्थिस्नायुरक्तसिरादिकान्। -**वैमा, प्रकरण**, १.६.१ पर बोधानन्द वृत्ति, पृ. १५

११. आकाशपरिधिकेन्द्रेषु वातार्काश्वग्निसम्भवाः। द्वाविंशदुत्तरशतसंख्याका विषशक्तयः। विमानपथसन्ध्यन्तं प्रवहन्ति विशेषः विमानचारिणां देहमारका इति तास्स्मृताः।–**वैमा. प्रकरण**, २.१.१, पृ.३२

१२. वातद्वयावर्तशक्तिसन्धौ सूर्यांशुघट्टनात् भवेत् कुलिशवत् सूर्यातपनिपातनम्।–**वैमानिक प्रकरण**, २.३.७, पृ. ७४

१३. अथ गुहागर्भदर्पणनिर्णयः। वारुणीवातकिरणशक्तिसङ्घर्षणक्रमात्। जायन्ते रोगदा नृणां गुहाद्या विषशक्तयः। तास्समाहृत्य वेगेन विद्युत्संयोगतः पुनः प्रसार्य परयानस्थजनोपरि विशेषतः। -**वैमा. प्रकरण**, २.१.१., पृ. ३६

१४. सूर्यादिसर्वग्रहाणां राशिसंस्थानतस्तथा। चारातिचारवक्रातिवक्रसञ्चारकारणात्। भवेन्मेषादिराशिस्थशक्तिसंमंथनं क्रमात्। तेनाकाशतरङ्गस्थशक्त्युद्रेको भवेत् स्वतः। तयोस्सङ्घर्षणं पश्चात् जायतेऽत्यन्तवेगतः। तस्मात् तच्छक्तिप्रवाहाश्चाग्निज्वालाप्रवाहवत्। अनुलोमविलोमाभ्यां वक्रगत्यतिवेगतः। प्रवहन्ति विशेषेण रश्मिभोगानुसारतः। सञ्चारकाले स्वपथे विमानाङ्गोपरि क्रमात्। तत्प्रवाहोष्णसंयोगो यदङ्गे स्यात् विशेषतः। दग्ध्वा भस्मीकृतो भूयात् तदङ्गमतिशीघ्रतः।–**वैमानिक प्रकरण**, २.३.७, पृ. ५८

१५. क - तदुक्तं क्रियासारे। बाणास्थधूमकेतूनां मण्डलस्याष्टमेऽन्तरे। त्रिकोटिसप्तलक्षत्रिसहस्रद्विशतोपरि। एक विंशतिसंख्याका वर्तन्ते धूमकेतवः। विद्युद्गर्भास्तेषु धूमकेतवोऽष्टसहस्रकाः। ख - विद्युद्द्वादशकयुक्तं शक्तितन्त्रे। रोचिषी दाहका सिंही पतङ्गा

कालनेमिका लता बृंदा रटा चण्डी महोर्मीपार्वणी मृडा। उल्कानेत्रस्थिता ह्येते विद्युतो द्वादश क्रमात्। ग - धूमकेतव उक्ता खेटसर्वस्वे-महाकालो महाग्रासो महाज्वालामुखस्तथा। विस्फुलिङ्गमुखो दीर्घवातो रङ्गो महोर्मिकः। स्फुलिङ्गवमनो गण्डो दीर्घजिह्वो दुरोणकः। सर्वास्यश्चेति विद्युन्नेत्रोल्का द्वादशधा स्मृताः। तेषां विद्युत्समूहास्तु शरद्वासन्तयोः क्रमात्। भवन्त्यादित्यकिरणेष्वन्तर्भूतास्स्वभावतः। किरणोल्कस्थशक्तीनां परस्परविमेलनात्। भवेदजिगरा नाम काचिच्छक्तिर्भयङ्करा। खस्थद्वाविंशतिभकेन्द्रमुखमध्ये यथाक्रमात्। व्योम-यानस्समायाति तदाजि- गरसंज्ञिका। शक्तिर्यानस्तम्भनं स्ववेगात् तत्र करोति हि।**–वैमानिक प्रकरण,** २.३.७, पृ. ८९

१६. उक्तं हि खेटविलासे– अग्निषोमात्मिका सौरी समशीतोष्णरूपिणी। अन्तश्शीतलतामेत्य बाह्येत्यन्तोष्ण- रूपताम्।–आकृष्य सूर्यकिरणास्थितवासन्तिकान्ततः। वसन्तेनर्तुनेत्यादिश्रुतिवाक्यानुसारतः। कृत्वाभिषेकं पश्चात्तद्हृदिकोशाष्टकेऽपि च। प्रमापल्लवपुष्पादीन् करोत्यगलतादिषु। तथैव प्राणिनां देहसप्तधात्वादिषु क्रमात्। बलदाढ्यप्रकाशादीन् संप्रयच्छति पुष्कलम्। -**वैमानिक प्रकरण,** २.३.७, पृ. ६६-६७

१७. यन्त्रसर्वस्वेपि वसन्तग्रीष्मयोर्मध्यरेखाप्रान्तेषु भूरिशः। आवृत्तशक्तिष्वंशूनां प्रवेशो भविता यदि। तदा संजायते कोलाहलज्वालावली स्वतः। आकाशपञ्चमे कक्ष्ये विनामस्संचरेद् यदि। तत्र कोलाहलज्वालावेगाद् भस्मीकृतं भवेत्।–वैमानिक प्रकरण, २.३.७, पृ. ८२

१८. ग्रीष्मे पञ्चशिखाशक्तिर्वसन्ते सौरिकाभिधा। वायव्याग्नेयकेन्द्राभ्यामीषादण्डस्य वेगतः। जायते सूर्यकिरणसंसर्गादूष्मरूपतः। तयोः पञ्चशिखाशक्तिर्विषद्वयविराजिता।–तथा पञ्चशिखाशक्तिर्विषरूपा हि गृन्धिका। स्थावरं जङ्गमं व्याप्य तद्धातून् सप्त शोषयेत्। तथैव मारिका नाम शक्तिरन्या स्वभावतः। स्थावरे काण्डवल्कांश्च हृतकोशान् पञ्चजङ्गमे। सङ्कोचं कुरुते सम्यक् तेन पुष्टिविनाशनम्।**–वैमानिक प्रकरण,** २.३.७, पृ. ६६-६७

१९. ग्रीष्मोष्मकिरणवर्गविभागेषु यथाक्रम। द्वितीयवर्गकिरणा पञ्चाशीति सहस्रकाः। तेष्वष्टत्रिदशसंख्याकांशवोत्यन्तमूष्मकाः। कूर्मस्थप्रलोभ्यशक्त्याकर्षणेन स्वभावतः। एकीभूय यदा ग्रीष्मे मिलिताः स्युः परस्परम्। तदा संजायते काचित् कुलिकाख्या महत्तरा। शक्तिरत्यन्तोष्णरूपा त्वग्निज्वालावलीरिव। -**वैमानिक प्रकरण,** २.३.७, पृ. ६६-६७, तु. ऋतुकल्प एवं तन्त्रमत

२०. कुजार्कशनिजम्भारिबुधमाण्डलिको रुरुः। विश्वप्रकाशकश्चेति ग्रहाश्चाष्टावितीरिताः। कृत्तिका शततताराश्च मखा मृगशिरा तथा। चित्राश्रवणपुष्याश्वीत्यष्टमा इति निर्णयः। स्वस्वसञ्चारपरिधिमण्डलकेन्द्ररेखासु चारतः। एते ग्रहाश्च नक्षत्रास्सामीप्यं शरदि क्रमात्। **-वैमा. प्रकरण, २.३.७** पृ. ९४

२१. तथैव शततारार्कशक्तिसङ्घर्षेण च। शीतज्वालामुखी नामका चिच्छक्ति प्रजायते। -वैमानिक प्रकरण, २/३/७, पृ.-९४

२२. तदुक्तम् ऋतुकल्पे।–पश्चादादित्यकिरणसम्पर्कात्ता यथाक्रमम्। विभिद्यन्ते त्रिधा सम्यक्शक्तिसम्मेलनक्रमात्। तासां नामानि शास्त्रोक्तप्रकारेणाभिवर्ण्यते। शीतज्वाला शैत्यदंष्ट्रा तथा शक्त्योद्गमा क्रमात्। सम्मिलित्वा शीतरसवातशक्तिरभूत् स्वतः। एवं शैत्यरसज्वाला शैत्यहेमा च स्फोरणी। मिलित्वैता वारिशीतसीकराः शक्तितां ययुः। तथा शीतघनरसा शैत्यमण्डूकिनी क्रमात्। परस्परं मिलित्वाथ महावेगेन तत्क्षणात्। शीतवातरसप्रावहिकशक्तित्व-मापतुः। -**वैमानिक प्रकरण,** २.३.७ पृ. ९५

२३. क्षजलभहशक्तिसंयोगात् किरणाकर्षणम्। -**वैमानिक प्रकरण,** २.३.७ पृ. ४९

२४. गोपथकारिका-शिरीषमेघभूताराकाशानां शक्तयः क्रमात्। शास्त्रेऽस्मिन् क्षजलभट्टवर्णैस्साङ्केततस्मृताः। आसां सम्मेलनं कृत्वा प्रयोगादम्बरे स्फुटम्। परिवेषो भवेत् सम्यगादित्यस्य यथा घनैः। तेनार्ककिरणाकर्षणं भवेन्नात्र संशयः। -**वैमानिक प्रकरण, २.३.७,** पृ. ४९

२५. वायुतत्त्वप्रकरणोक्तरीत्या वातस्तम्भाष्टमपरिधिरेखापथस्य यासा-वियासा-प्रयासादिवातशक्तिभिः सूर्यकिरणान्तर्गत- तमश्शक्तिमाकृष्य तत्संयोजनद्वारा विमानाच्छादनरहस्यम्। **–वैमानिक प्रकरण,** १.२.२.(५) पृ. ६

२६. आकाशमण्डले विद्युद्वातकिरणशक्त्योः परस्परसम्मेलनात् सञ्जातबिम्ब-बिम्बकृच्छक्तेः विमानपीठपुरोभागस्थविश्व- क्रियादर्पणबिले प्रतिफलनं कृत्वा पश्चात् तत्प्रकाशसंनिवेशनद्वारा मायाविमानप्रदर्शनरहस्यम्। **–वैमानिक प्रकरण,** १.२.२.(६) पृ. ६

२७. शक्तितन्त्रोक्तरीत्या सूर्यरथेषादण्डप्राङ्मुखपृष्ठकेन्द्रस्थवैणरथ्यविकरणादिशक्तिभिः आकाशतरङ्गस्थशक्तिप्रवाह- माकृष्य वातमण्डलस्थबलाहाविकरणादिशक्तिपञ्चके नियोज्य तद्द्वारा श्वेताभ्रवन्मण्डलाकारं कृत्वा तदावरणात् विमानादृश्यकरणहस्यम्। **–वैमानिक प्रकरण,** १.२.२.(७) पृ. ६

२८. अंशुबोधिन्यामुक्तप्रकारेण संज्ञानादिषोडशसूर्यकलासु द्वादशाद्याषोडशान्त कलाप्रभाकर्षणं कृत्वा आकाशचतुर्थपथस्थमयूखकक्ष्यस्थितवायुमण्डले नियोजयेत्। तथैव खतरङ्गशक्तिप्रभामाहृत्य वातमण्डलसप्तमावरणस्य प्रभाशक्त्या सम्मेलयेत्। पश्चादेतत् शक्तिद्वयं विमानस्थनालपञ्चकद्वारा विमानगुहागर्भदर्पणयन्त्रतृतीयकोशे सन्धार्य तद्द्वारा विमानद्रष्ट्रणांबालातपवत् प्रकाशप्रदर्शनरहस्यम्। -**वैमा. प्रकरण** १.२.२.(१५) पृ. ८

२९. वातजलसूर्यकिरणप्रभाशक्तीनां दशसप्तषोडशांशान् खतरङ्गशक्त्या संयोज्य तच्छक्तिं तारमुखदर्पणद्वारा विमानमुखकेन्द्रशक्तिमालमुखप्रसारणात् सर्वेषां नक्षत्रमण्डलवत् प्रदर्शनक्रियारहस्यम्। **–वैमानिक प्रकरण,** १.२.२(२२) पृ. ९

३०. दण्डवक्त्रादिसप्तविद्यमातरिश्वार्ककिरणशक्तीराकृष्य यानमुखस्थवक्त्रप्रसारणकेन्द्रमुखे नियोज्य पश्चात् तदाहृत्य शक्त्युद्गमनाले प्रवेशयेत्। ततः तत्कीलीचालनात् विमानस्य सर्पवत् गमनक्रियारहस्यम्। **–वैमानिक प्रकरण,** १.२.२(२२) पृ. ९

३१. जलदरूपरहस्यो नाम -**वैमा. प्रकरण** १.२.२ (३०), पृ. १०-११

३२. दर्पणप्रकारोक्ततमोशक्त्यपकर्षणदर्पणद्वारा तमश्शक्तिमाहृत्य विमानपञ्चरवायव्यकेन्द्रस्थतमोयन्त्रमुखात् तमोविद्युति सन्धाय तत्कीलीचालनात् मध्याह्नकाले अमारात्रिवत् तमोविकारप्रदर्शनरहस्यम्। -**वैमानिक प्रकरण,** १.२.२ (१६) पृ. ८

३३. भगवती प्रसाद सिंह-मनीषी की लोकयात्रा, पृ. १७३

३४. वही, पृ. १०१-१०२

३५. वही, पृ. १२३-१२४